4

सहकारी सभाओं का विश्लेषण

नीति व उद्देश्य

सरकार की के.एफ.सी.एस. के उद्देश्यों की संकल्पना - केवल उन नष्ट प्राय: वनों, जिनमें वन विभाग के संरक्षण के प्रयासों को विशेष सफलता नहीं मिली, के संरक्षण, सुधार व प्रबन्ध में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करना थी । यह सीमित भागीदारी, बीसवीं सदी के दूसरे दशक में सरकार व वन विभाग में प्रचलित आम विचार धारा के बिल्कुल अनुरूप थी । असल में यह पहल ऊपर से प्रवर्तित की गई सहभागी वन प्रबन्धन प्रक्रिया थी । भू-क्षरण को रोकने पर जोर और वन विभाग द्वारा तैयार की गई कार्य योजनाओं के माध्यम से लागू किए गए रकबे बन्द करने के सुझाव यह प्रकट करते हैं कि वन विभाग की यह अवधारणा अधूरी है, कि वन क्षेत्रों में विशेष कर शिवालिक के निचले क्षेत्रों में बढ़ते हुए भू-क्षरण के लिए बेरोकटोक चरान मुख्य कारण था ।

वन उत्पादन को अपने सदस्यों के अधिक से अधिक लाभ के लिए प्रयोग में लाने पर बल देना, वन विभाग द्वारा इमारती लकड़ी की वर्तनदारों को बिक्री से होने वाली आय को बरतनदारों में बांटना, इमारती लकड़ी व बिरोजा की व्यापारियों को बिक्री से होने वाली आय को बांटना और के.एफ.सी.एस. को घास, रेत, बजरी और वन क्षेत्र के अन्य खनिजों की नीलामी से होने वाले लाभ पर अधिकार देना, योजना की दूर-दृष्टि जतलाता है । वन भूमियों से प्राप्त कुछ लाभों को के.एफ.सी.एस. की ओर प्रभाहित होने के लिए अनुमति प्रदान कर, वन विभाग सभाओं के आर्थिक समर्थता और योजनाओं मे उनको निरंतर सहभागिता को सुनिश्चित कर सकता था ।

संस्थागत विश्लेषण

के.एफ.सी.एस. की कुछ मुख्य विशेषताएं परिशिष्ट 4 में दी गई है ।

संस्था के रूप का चयन

गारबेट आयोग ने सिफारिश की थी कि इस प्रयोग की पहल, लोगों और उनके प्रतिनिधियों को सम्मिलित करके की जानी चाहिए । इस विचार से कि यह प्रदर्शन लोगों के योग्य प्रतिनिधियों के माध्यम से परखे जाऐं - पंचायतों का गठन किया जाना था और वनों के प्रबन्धन का उत्तरदायित्व सौंपा जाना था । यद्यपि भारतीय वन-अधिनियम 1927 में गांवों के वनों सम्बन्धी एक अलग धारा थी, वन विभाग को यह स्वीकार नहीं था कि आयोग द्वारा सुझाई गई ग्रामीण स्तरीय संस्थाएं, उत्तराखण्ड में गठित की गई वन पंचायतों जैसी हों, जो कांगड़ा से बहुत दूर नहीं । इस तरह योजना के आरम्भिक दिनों में जब गारबेट आयोग की सिफारिशें लागू करने का प्रयास किया जा रहा था वन विभाग ने वन पंचायतों के गठन की उपेक्षा की । उनका कथन यह था कि विद्यमान पंचायतों का कार्य प्रशासनिक था और यह कि वनों के प्रबन्धन के लिए अलग संस्था बरतनदारों से ही गठित की जा सकती थी । जबकि यह कुछ पहाड़ी क्षेत्रों के बारे में सत्य हो सकता था, पर वास्तविक तौर पर गांवों को पंचायतों में संघटित करने का काम 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद शुरू हुआ और पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों में यह काम 1955 तक पूरा नहीं हुआ था । वर्ष 1940 तक कांगड़ा में कोई पंचायत विद्यमान नहीं थी इसलिए वन विभाग द्वारा अलग संस्था खड़ी करने की बात स्पष्ट नहीं लगती ।

उत्तर-प्रदेश के कुमाऊं व गढ़वाल पहाड़ी क्षेत्रों में स्थिति बिल्कुल भिन्न थी । इमारती लकड़ी व राजस्व सम्बन्धी ब्रिटिश सरकार की नीतियों द्वारा वनों का अन्धाधुन्ध दोहन व वनों पर समुदायों की पहुंच कम किए जाने के कारण विविध प्रकार के विरोध प्रदर्शन हुए । स्थानीय समुदायों द्वारा वन अन्दोलनों के इस दौर से सन् 1925 में ब्रिटिश सरकार को एक शिकायत कमेटी की स्थापना के लिए बाध्य होना पड़ा - इस कमेटी की स्थापना, लोगों की वन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के उपाय सुझाने के लिए की गई । वन पंचायत (वन प्रबन्धन के लिए स्थानीय चयनित संस्था) प्रणाली का सुझाव दिया गया और

इनको बीसवीं सदी के तीसरे दशक के दौरान कायम किया गया । यह वन-पंचायतें आज तक कार्य कर रही हैं । यह समझ में नहीं आता कि कांगड़ा में वन प्रबन्धन के लिए वन पंचायतें क्यों गठित नहीं की गई ।

के.एफ.सी.एस. भगोटला की 300 कनाल भूमि पर उगा वन, घास इत्यादि उत्पादन दो गांवों में सर्वसम्मति से बांटा जाता था ।

सहकारी सभाओं के माध्यम से कार्य करने का चुनाव करने का साफ तात्पर्य था, वन-विभाग व राजस्व विभाग के साथ सहकारिता विभाग को जोड़ना । सहकारिता विभाग द्वारा के.एफ.सी.एस. की नियमित रूप से विभिन्न प्रकार से, प्रबन्धन यथा निर्वाचन, लेखा प्रबन्ध व लेखा परीक्षा आदि मामले में सहायता की जाती थी । वन सम्बन्धी मामलों में मुख्य रूप से वन विभाग सहायक होता था । पर साक्ष्य मिलता है कि उन विभागों में जिन पर इन नई संस्थाओं के विभिन्न पहलुओं के प्रबन्धन का उत्तरदायित्व था, उन में आपसी तालमेल की कमी और भ्रम की स्थिति बनी रही । लगता है इस समय सरकार की नीति ही के.एफ.सी.एस. के गठन के मामले में उलझन पैदा करने के लिए जिम्मेवार थी ।

यह निर्देश दिया गया था कि जिलाधीश के.एफ.सी.एस. के कुशल संचालन के लिए पूरे तौर पर जिम्मेवार होगा[15] । सहकारिता विभाग की जिम्मेदारी थी के.एफ.सी.एस. का गठन करना और वन विभाग पर के.एफ.सी. एस. की क्रियाशीलता के लिए वन सम्बन्धी पहलु में सहायता करने एवं उनकी सफलता की जांच करने का भार था । परन्तु इन विभागों के कार्य को समन्वित करने अथवा एक दूसरे से जोड़ने के लिए कोई रचनातन्त्र तैयार नहीं किया गया ।

के.एफ.सी.एस. के गठन की दूसरी उलझन यह थी कि इसे सहकारी सभा का गैर लचीला ढांचा व पूर्व निर्मित संस्था का रूप विरासत में मिले थे । सहकारिता के उप नियम पूर्व परिभाषित थे । इसका प्रस्तावित ढांचा जिसके अनुसार इसकी रचना करने का निर्देश हुआ, वह सरकार के सहकारिता क्षेत्र में पूर्व सहकारी सभाओं के क्रियान्वयन प्रक्रिया में तीस वर्ष के अनुभव पर आधारित था । इस कारण उद्देश्यों और प्रक्रियाओं को पुनः परिभाषित करने की कोई गुंजाइश नहीं बची थी । इसके साथ ही सहभागी वन प्रबन्ध के लिए एक सान्झी मर्यादा वाली संस्था के रूप में पंजीकरण से के.एफ.सी.एस. को एक अनोखी शक्ति मिली जिसे वन विभाग द्वारा अपनी विचारधारा या समर्थन में परिवर्तन होने पर भी दबाया नहीं जा सकता था ।

बिल्कूल इसी कारण वन विभाग द्वारा के.एफ.सी.एस. के विघटन के सभी प्रयास, सहकारिता विभाग द्वारा मान्यता प्राप्त सहकारी सभाओं के रूप में इनकी स्वायत्ता को हानि नहीं पहुंचा सके । कुल मिलाकर इसकी शक्तियां व कमजोरियां होते हुए भी के.एफ.सी.एस. की पहल की तुलना उत्तर प्रदेश के दूसरे भागों में गठित वन पंचायतों से करनी चाहिए ।

सहकारिता विभाग, वन विभाग और प्रशासन विभाग जो के.एफ.सी.एस. के विभिन्न पहलुओं के कार्य के लिए उत्तरदायी थे उनके समन्वयन के लिए कोई नियमित मंच का न होना एक गम्भीर संस्थागत कमजोरी थी । इस योजना के आरम्भिक वर्षो में सहकारिता व वन विभाग के शीर्षस्थ अधिकारियों द्वारा सफल के.एफ.सी.एस. के निरीक्षण के बाद की गई रिपोर्टो में इनके कार्य की सराहना की गई है । बाद में प्रस्तुत समन्वयन का ढंग पत्राचार द्वारा सलाह

मशविरा के रूप में बदल गया । इस कठिन प्रक्रिया का कारण था अन्तर्विभागीय बहुस्तरीय अफसरशाही ।

सदस्यता की कसौटी

सदस्यता के लिए साधारण योग्यताओं तथा्, 18 वर्ष आयु का होना, दीवालिया न होना या दिमागी तौर पर स्वस्थ होना, के अतिरिक्त मुख्य शर्त यह भी थी कि प्रत्येक सदस्य का वैध हिस्सा, के.एफ.सी.एस. का प्रबन्ध के लिए दिए जाने वाले वनों में होना चाहिए । भूमि बन्दोवस्त के सिद्धान्तों के अनुसार उन्हीं लोगों को शामलात या वनों में अधिकार होता था जिनके नाम अपने स्वामित्व की कृषि भूमि हो (खेवटदार) । इस कसौटी के कारण वह सभी जातियां जिनके पास भूमि नहीं थी, और बहुत सी महिलाएं स्वत: सदस्यता अधिकार से बाहर हो गई क्योंकि उनके वनों में अधिकारों का कोई लिखित ब्योरा नहीं था ।

सहभागी वन प्रबन्धन की मौलिक इकाई प्रबन्ध के लिए शामिल किए जाने वाले ऐसे वन होते थे जिन वनों पर पहले से ही लिखित अधिकार दर्ज थे, यह आवश्यक नहीं कि ऐसे अधिकार सब गांव वासियों को प्राप्त हों ।

इसके अतिरिक्त-क्योंकि वही खेवटदार सदस्य बन सकते थे जिनके अधिकार के.एफ.सी.एस. द्वारा प्रबन्धन में लिए जाने वाले वनों में होते थे, वह खेवटदार जिनके अधिकार के.एफ.सी.एस. द्वारा प्रबन्धित वनों के बजाए दूसरे वनों में थे वह सदस्य नहीं बन सकते थे । के.एफ.सी.एस. खलेट की निरीक्षण टिप्पणी से पता चलता है कि 11 वर्ष के कार्यकाल के बाद भी गांव के 364 खेवटदारों में से 231 खेवटदार ही के.एफ.सी.एस. के सदस्य बने थे । भूमिहीन और बहुत से खेवटदारों व बरतनदारों का इस प्रकार का बहिष्कार - के.एफ.सी. एस. के जंगलों के प्रबन्धन से प्राप्त होने वाले लाभ के विषम वितरण का कारण बना । जिसका जिक्र 1955 को पंजाब के मुख्यमन्त्री की टिप्पणी में भी है ।

के.एफ.सी.एस. का गठन के समय, गांव का जातिगत ढां़चा, पक्के तौर पर श्रेणी बद्ध था, जिसका नमूना के.एफ.सी.एस. की प्राथमिक सदस्यता में भी दिखाइ देता है । 1971 के बाद बहुत सी के.एफ.सी.एस. ने, काफी हद तक

भागीदारी में विषमता पर काबू पाने में सफलता प्राप्त की । अनेक भू-सुधार व फसल बटाईगिरी अधिनियमों को उत्साहपूर्वक लागू करने से अधिकांश निवासी परिवार कम से कम 0.4 हैक्टर भूमि के मालिक हो गए । दूसरे, उन परिवारों को, जो के.एफ.सी.एस. के गठन के बाद गांव में बसे और उन्होंने भूमि खरीदी, भी बर्तनदार माने गये उन्हें बहुत सी स्थितियों में के.एफ.सी.एस. का सदस्य बनाया गया और वनों से होने वाली आय में भी भागीदार बनाया । नूरपुर तहसील में गद्दी और गुज्जर (निम्न जाति समुदाय) आज भी के.एफ.सी.एस. के सदस्य है पर ऊंची जातियों विशेषकर ब्राह्मण और राजपूतों (जिला की कुल जनसंख्या का 34 प्रतिशत) का नियन्त्रण प्रबन्ध समिति में उनके भारी बहुमत से स्पष्ट दिखता है । महिलाओं का प्रतिनिधित्व नहीं होता था क्योंकि उनके नाम जमीन का स्वामित्व दर्ज नहीं होता था । 10 प्रतिशत से भी कम ही सदस्य महिलाएं थीं और बहुत सी सभाओं में तो एक भी महिला सदस्य नहीं था, केवल गहीन-लगोड़ के.एफ.सी.एस. में एक महिला कार्यकारिणी की सदस्य है ।

अधिकार

अधिकारों और उत्तरदायित्वों के संतुलन को पुनः परिभाषित करते हुए सामुदायिक नियन्त्रण की व्यवहारिक प्रणाली का पुनः स्थापित करने का प्रयास करना सम्भवतः इस पहल की अतिमौलिक उपलब्धि थी, के.एफ.सी.एस. में सम्मिलित होने के लिए, प्रत्येक सदस्य द्वारा अपने व्यक्तिगत अधिकारों को सभा के अधीन कर देना, पूर्व-शर्त थी । (अनुबन्ध परिशिष्ट 2) । वनों का प्रबन्धन करना और अपने सभी सदस्यों को उनके अधिकारों के अनुरूप लाभ मिले, यह सुनिश्चित करना सभा की जिम्मवारी थी ।

इस तरह, सभी अधिकार स्वामियों के दावों को पूरा करने की वनों की योग्यता पर भार डाले बिना, किसी एक अधिकार स्वामी की विशिष्ट भागों की श्रेष्ठता पर नियन्त्रण रखा जा सका जिससे, उपलब्ध एवं निकासी योग्य फालतू उत्पादन को अधिकार स्वामियों में बराबर वितरण करना सम्भव हुआ ।

इससे दोहन की व टिकाऊ व्यवस्था कायम करने के लिए आवश्यक नियन्त्रण प्रचलन हुआ । के.एफ.सी.एस. कार्यकारिणी के निर्देशों के अनुसार वनों के संरक्षण, आरक्षण व संवर्धन के लिए काम करना प्रत्येक सदस्य का

उत्तरदायित्व हो गया ताकि सामुदायिक, संसाधन भण्डार में से व्यक्तिगत और सभी सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके ।

क्षेत्रों के चयन की कसौटी

के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए विस्तृत प्रक्रिया 1949 में अधिसूचित की गई । कर्मचारी वर्ग की कमी के कारण कार्यक्षेत्र व्यास नदी के उत्तर में स्थित कांगड़ा जिला के भागों तक ही सीमित रहा । यद्यपि मौजा ही मौलिक आर्थिक इकाई मानी गई थी यदि कोई प्रशासनिक समस्या खड़ी हो जाए तो एक टीका या टीकों के समूह को व्यवहारिक इकाई माना जा सकता था । कार्यक्षेत्र में उपलब्ध स्थिति के आधार पर छोटी से छोटी इकाई के चयन में उपरोक्त लचीलापन, कांगड़ा में प्रचलित उलझावपूर्व अधिकार व्यवस्था के बावजूद, योजना को व्यवहारिक बनाने में लाभदायक सिद्ध हुआ ।

के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए क्षेत्रों के चयन में ऐसे गांवों को अधिमान दिया गया जिनमें भूक्षरण एवं अन्धाधुन्ध वन-कटान से ग्रस्त बड़े आकार के इक्ट्ठे-2 अप्रबन्धित बंजर क्षेत्र हों । ऐसे गांव जिनमें पहले से ही सहकारी सभाएं होती थी उन्हें भी के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए बेहतर समझा गया । वन विभाग का विश्वास था कि टीकों और बर्तनदारों की कम संख्या, संस्था के काम को सुगम कर देगी । आरम्भ में इस परियोजना प्रयोग की क्षमता को प्रदर्शित करने के लिए उन गांवों को चुना गया जिनकी भूमि पर स्वस्थ व घने वन खड़े थे । उदाहरण के लिए तृपल को के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए चुना गया और क्षेत्र के अन्य बहुत से गांव जिनमें नष्ट प्राय: वन व भूमि थे छोड़ दिए गए । यह बात उपरोक्त सोच की संवेदनशीलता प्रदर्शित करती है इससे के.एफ.सी.एस. योजना को किसानों के सरकार के प्रति शंकालु व्यवहार के बावजूद, लोकप्रियता प्राप्त हुई ।

योजना के विस्तार का तरीका

सहकारिता उप-निरीक्षक जो वन सहकारी सभा के लिए तैनात होता था के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए उत्तरदायी था । चयन के बाद वह वनमण्डल अधिकारी के पास उपस्थिति देता था और वनमण्डल अधिकारी या उसका कोई सहायक अधिकारी उपनिरीक्षक के साथ क्षेत्र का दौरा करता था । यदि वह

गांव को शामिल करने का निर्णय करते तो बर्तनदारों और वन विभाग के कर्मचारियों के साथ बैठक की जाती और योजना के विस्तृत विवरण पर, एवं इससे होने वाले लाभों पर चर्चा होती । उपनिरीक्षक सदस्यों की सूचि तैयार करता और उनसे अनुबन्ध पत्रों पर हस्ताक्षर करवाता । प्रत्येक टीका में बर्तनदारों को शामिल करने के लिए मीटिंग की जाती । अनुपस्थित रहने वालों की भी उपेक्षा नहीं की जाती और उनकी स्वीकृति निर्दिष्ट प्रपत्र पर या उनके नजदीकी सम्बन्धी से ले ली जाती । इस तरह सम्बन्धित विभागों का सक्रिय सहयोग क्षेत्रीय स्तर पर सुनिश्चित किया जाता । दुर्भाग्यवश उच्च स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में इस स्तर का समन्वय गायब था ।

लोगों की सहभागिता

के.एफ.सी.एस. के बारे में अधिसूचनाओं में कहीं भी लोगों की सहभागिता का जिक्र नहीं है । पर कार्य-योजना बनाने के दौरान सभा एवं ग्रामीणों[19] से विचार विमर्श करने पर बल दिए जाने से पता चलता है कि परामर्शक भागीदारी के लिए स्थान रखा गया था । के.एफ.सी.एस. के अतिरिक्त अन्य वनों में जिनका संरक्षण व प्रबन्धन वन विभाग द्वारा पारम्परिक ढंग से किया जाता था, ऐसा प्रावधान उस समय नहीं था । बीसवीं सदी के चौथे दशक में के.एफ.सी.एस. के गठन के समय जो प्रक्रियाएं सरकार ने आरम्भ की उनका विश्लेषण करना आवश्यक है । क्या यह नवीन सामुदायिक संस्थाए थी या वन एवं सहकारिता विभाग द्वारा अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थापित सुविधाजनक साधन मात्र थी, ? उतना ही गम्भीर यह विषय है कि गांव के किन वर्गों ने के.एफ.सी.एस. को सामुदायिक वन प्रबन्धन के एक रचना तन्त्र के रूप में स्वीकार किया ? आर्थिक व सामाजिक भूमिका क्या थी और स्थापित ढ़ाचा कितना सहभागिता-परक था ?

इन प्रश्नों के उत्तर पाने के लिए ठोस व वास्तविक अभिलेख तलाशना कठिन है । बीसवीं सदी के चौथे दशक (1940-50) में गांव के लोग अधिकतर अनपढ़ थे । कुछ लोग जो पढ़े लिखे थे वह केवल उर्दू भाषा ही लिखते और पढ़ सकते थे जिस कारण कोई गैर सरकारी, स्वतन्त्र दस्तावेज़ जिसमें लोगों के विचारों व अनुभवों का जिक्र हो, उपलब्ध नहीं ।

पिछली अर्ध-शताब्दी के दौरान बहुत सी सभाओं के अभिलेख तो खो गए हैं परन्तु के.एफ.सी.एस. की बैठकों के विस्तृत विवरण काफी मात्रा में उपलब्ध हैं । के.एफ.सी.एस. के बारे में आरम्भिक काल के मौखिक विवरण भी अब उपलब्ध नहीं क्योंकि उस समय की नेतृत्व करने वाली पीढ़ी के लोग अधिकतर चल बसे हैं । सहायक पंजीकार (सहायक सभाएं) के कार्यालय में के.एफ.सी.एस. के पंजीकरण सम्बन्धी फाइलों में फिर भी पत्राचार स्मारक पत्रों, निरीक्षण टिप्पणियों और झगड़ों के बहस सम्बन्धी विवरण मिल रहे हैं ।

उपलब्ध प्राथमिक आंकड़ों व थोड़े से गौण आंकड़ों से पता चलता है कि सरकार ने स्थानीय लोगों को मान्य नेतृत्व के माध्यम से के.एफ.सी.एस. योजना को आगे बढ़ाया । ऐसा करने पर भी के.एफ.सी.एस. के गठन के आरम्भिक दिनों में भ्रमजाल बना रहा - क्योंकि गांवों के लोग कार्ययोजना में दिए गए सुझावों पर बंटे हुए थे । सबसे तीखे झगड़े-रकबे बन्द करने के विषय पर होते थे । साक्ष्य मिलता है कि विभिन्न प्रकार के प्रदर्शन विरोधी गुटों द्वारा विरोध किए गए, विशेषकर तब जब सरकार के.एफ.सी.एस. के गठन के लिए बैठकें आयोजित करती ।

इस आरम्भिक अलगाव के उपरान्त, जब सभाओं को आय और लाभ प्राप्त होने लगे, सदस्यता-अभियान ने जोर पकड़ा । सदस्यों ने नि:शुल्क पेड़ लगाने का काम हाथ में लिया । उदाहरण के तौर पर के.एफ.सी.एस. परौर के प्रत्येक सदस्य ने प्रति वर्ष पांच पांच पेड़ लगाए । राखा और वन-अधिकारियों को सेवाओं के लिए नकद व जिन्स के रूप में अदायगी की जाती थी । आम सभा में लिए गए निर्णय के आधार पर सदस्यों ने राखा को जिन्स के रूप में अदायगी करने को समर्थन दिया । जो के.एफ.सी.एस. के गठन के समय डेढ़ किलो प्रति परिवार वार्षिक था और अब प्रति राखा 700 कि.ग्रा. प्रतिवर्ष दिया जाता है । कुछ के.एफ.सी.एस. में सदस्य अपना हिस्सा सभा को दान कर देते थे, जिसे सभा विकास कार्यों पर व्यय करती थी । के.एफ.सी.एस. खलेट ने इस प्रकार एक पंचायत घर का निर्माण करवाया ।

के.एफ.सी.एस. की कार्य योजना के माध्यम से संरक्षण करने के लिए वन विभाग का रकबा-बन्दी करके व्यापारिक प्रजातियों विशेषकर चील के रोपण का

चहेता सुझाव यह प्रदर्शित करता है कि के.एफ.सी.एस. द्वारा अपने वनों का प्रबन्ध करने के लिए प्रयुक्त वन संरक्षण व वनवर्धन प्रणाली पर वन विभाग का कड़ा नियन्त्रण था ।

राजस्व अभिमुखता पर आधारित व्यापारिक (वानिकी) से यह स्थिति आ गई कि आज जिला के बहुत से के.एफ.सी.एस. के वन केवल चील से भरे पड़े है । इस लिए के.एफ.सी.एस. गांव समुदायों को पारम्परिक वन संरक्षण प्रणाली में जोड़ने अथवा सहायक बनाने के लिए माध्यम मात्र लगती है । खेवटदार के.एफ.सी.एस. सहभागी इसलिए बने क्योंकि उन्हें के.एफ.सी.एस. द्वारा प्रबन्धित वनों से, वन विभाग के पारम्परिक प्रबन्धन में रखे गए इन्हीं वनों की तुलना में अधिक आय व लाभ प्राप्त होता था ।

इस के पीछे गति देने वाली शक्ति को के.एफ.सी.एस. भगोटला के उदाहरण से आंका जा सकता है (तालिका न. 1 देखें)

वित्तीय प्रणाली

योजना में भुगतान करने और न करने वाली दोनों प्रकार की के.एफ.सी. एस. के गठन की आज्ञा थी । सोसाइटी एक प्रकार की हो या दूसरी प्रकार की यह निर्णय लेने के लिए क्या कसौटी प्रयोग की गई । क्या कार्य कुशलता व अच्छा प्रबन्ध सभा को आर्थिक तौर पर समृद्ध और आत्मनिर्भर बनाते है? इसी आधार पर सोसाइटी को भुगतान करने वाली सोसाइटी बनने की आज्ञा दी जाए । क्षेत्रीय अध्ययन बताते हैं कि जहां सभा को भाग्यवश बहुमूल्य और राजस्व देने वाले वन क्षेत्र प्रबन्धन के लिए प्राप्त हो जाते - इसी से उसका दर्जा समृद्ध बन जाता । सभा की आय के मुख्य स्त्रोत थे - बिक्री की गई इमारती लकड़ी में प्राप्त हिस्सा और ईंधन, घास, सफेद मिट्टी, रेत, बजरी एवं अन्य उत्पादों की बिक्री ।

कांगड़ा क्षेत्र की सहकारी वन सभाएं जिनके भूक्षेत्र में चील, खैर व शीशम के पेड़ थे, अन्ततः भुगतान करने वाली बन गई कुछ अपवाद है जैसे खनियारा के.एफ.सी.एस. अब भी-इसके पास स्थित पंचायत भूमि में स्लेट की खदान से इस सभा के वनों को ठेकेदारों द्वारा किए जाने वाले नुकसान की भरपाई के लिए जुर्मानों से भारी राशि आर्जित करती है ।

उन के.एफ.सी.एस. को जिन्हें घटिया किस्म की भूमि मिली, जिसमें नाममात्र के वन थे, पुनरूत्पादन के लिए (संरक्षण के बावजूद) समय लगा - जब तक कि अन्ततः सभा को उनसे आय होने लगती । ऐसी सभाओं को भुगतान न करने वाली सभाएं घोषित किया गया और सभा के राजस्व से अधिक, कार्य और कर्मचारियों पर होने वाला व्यय सरकार ने सभा की स्वीकृति की तिथि से लेकर 10 वर्ष तक वहन किया । इसके अतिरिक्त 600/- रूपये वार्षिक सहायक अनुदान भी दिया । सोलह के.एफ.सी.एस. आरम्भ से ही भुगतान करने योग्य सभाएं थी और शेष धीरे-धीरे कुछ वर्षो में उस स्तर पर पहुंच गई । वर्ष 1970 तक दो या तीन को छोड़ कर सभी भुगतान करने योग्य सभाएं बन चुकी थी । के.एफ.सी.एस. के आय के स्त्रोत निम्नलिखित थे ।

सहायक अनुदान

सरकार द्वारायह संकट कालीन सहायता वास्तव में विशेष अनुदान नहीं थी पर मुख्यतः यह के.एफ.सी.एस. के जमींदार सदस्यों के प्रति उनके जमींदारी हिस्से के रूप में सरकार द्वारा देयता राशि थी । इस हिस्से के के.एफ.सी.एस. के माध्यम से वितरण को, आय कम और वन विभाग द्वारा बकाया देय का ठीक समय पर किया गया भुगतान ज्यादा समझना चाहिए, जो अधिकतर सदस्यों द्वारा दिए जाने वाले लगान की अदायगी मात्र के लिए काफी होता था । सहायक अनुदान के रूप में दी गई राशियों में भारी भिन्नता होती थी जैसे कि त्रिपाल के के.एफ.सी.एस. के अभिलेखों से प्रकट होता है ।

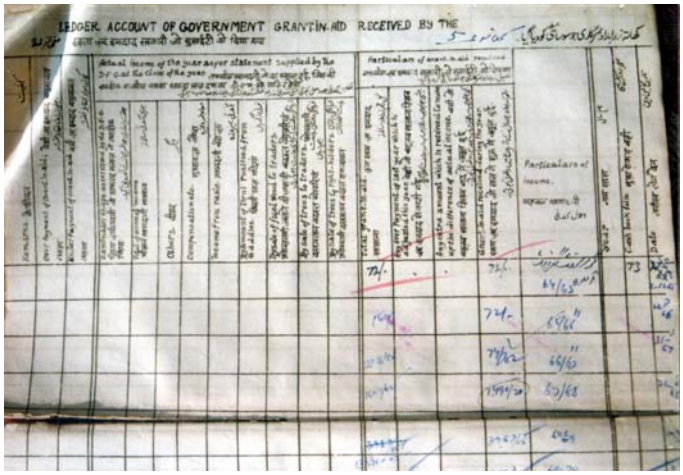

के.एफ.सी.एस. मरण्डा भंगियार द्वारा आज तक प्राप्त सहायक अनुदान का अभिलेख

तालिका 3: के.एफ.सी.एस. त्रिप्पल द्वारा 1947 से 1969 तक प्राप्त सहायक अनुदान	
तथि	राशि
21-7-46	50.00
19-7-48	96.00
14-1-49	120.00
31-3-49	96.00
15-12-49	216.00
30-6-50	25.00
10-2-51	290.00
30-12-52	59.80
28-9-53	1342.10
3-2-56	335.60
14-8-56	50.00
10-6-57	170.60
14-6-58	367.00
26-5-59	388.00
स्त्रोत :- के.एफ.सी.एस. त्रिप्पल के वित्तीय अभिलेख	

बिरोजा की बिक्री

कांगड़ा और नूरपुर वन-मण्डल की 15 के.एफ.सी.एस. में से बहुतों के लिए चील से निकला बिरोजा निर्यात के लिए मुख्य व महत्वपूर्ण उत्पाद था और राजस्व का स्रोत भी। वन विभाग बिरोजा निकालने के लिए प्रति क्विंटल 55 से 65 रूपये वसूल करता था । वन विभाग बिरोजा निकासी सम्बन्धित वन मण्डल अधिकारियों के माध्यम से करता था और बिरोजा खुली नीलामी द्वारा बेच दिया जाता या

इमारती लकड़ी की बिक्री

खड़े पेड़ छोटे-छोटे ठेकेदारों को बेच दिए जाते थे (व्यापारी दरों पर जो जमींदारी दरों से काफी ज्यादा थी) इन्हें लट्ठों या सलीपरों में परिवर्तित किया जाता और रेलवे लाइनें बिछाने के लिए नदियों द्वारा या ट्रकों द्वारा पठानकोट ले जाया जाता था । अधिक मांग चील की लकड़ी की थी जो कांगड़ा के ऊंचे पहाड़ी क्षेत्रों से प्राप्त चीड़ से घटिया तो होती थी, परन्तु पठानकोट में सस्ती दरों पर बिकती थी ।

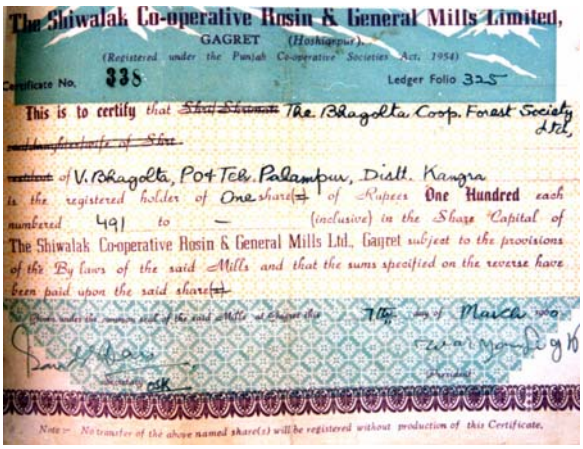

The Shiwalak Co-operative Rosin & General Mills Limited,
GAGRET (Hoshiarpur).
(Registered under the Punjab Co-operative Societies Act, 1954)
Certificate No. 338 Ledger Folio 325
This is to certify that ~~Shri Shriman~~ The Bhagolta Coop. Forest Society Ltd,
~~son/daughter/wife of Shri~~
~~resident~~ of V. Bhagolta, PO & Teh. Palampur, Distt. Kangra
is the registered holder of One share(~~s~~) of Rupees One Hundred each numbered 491 to — (inclusive) in the Share Capital of The Shiwalak Co-operative Rosin & General Mills Ltd., Gagret subject to the provisions of the By laws of the said Mills and that the sums specified on the reverse have been paid upon the said share(~~s~~).
Given under the common seal of the said Mills at Gagret this 7th day of March 1960
Secretary
President
Note :- No transfer of the above named share(s) will be registered without production of this Certificate.

सामने, शिवालिक कोप्रेटिव रोज़िन एण्ड जनरल मिल्ज़ कम्पनी लि. का शेयर प्रमाण पत्र दिया गया है । कम्पनी को के.एफ.सी.एस. का सांकेतिक सदस्य बनाया गया, ताकि इसे उस के.एफ.सी.एस. की कार्यकारिणी का सदस्य बनाया जा सके जिससे यह अपनी जरूरत के लिए बिरोजा खरीदती थी ।

सरकारी क्षेत्र के बिरोज़ा व तारपीन कारखाना नाहन को अनुबन्धित दरों पर दे दिया जाता । वन विभाग बिरोज़ा निकासी एकत्रीकरण और देखरेख पर हुए। खर्चो को काटकर शुद्ध लाभ के.एफ.सी.एस. को दे देता था । तालिका 4 में 1964 से 1967 तक इन के.एफ.सी.एस. द्वारा किया गया बिरोजा का औसत वार्षिक संग्रह व प्राप्त राजस्व - दिखाया गया है ।

वर्ष 1964 और 1967 के बीच कांगड़ा व नूरपुर वन मण्डल की 15 के.एफ.सी.एस. ने मिलकर प्रतिवर्ष औसत 1390 क्विंटल बिरोजा उत्पादन किया और 86,500/- रूपये का राजस्व प्राप्त किया ।

तालिका 4: 1964 और 1967 के बीच कांगड़ा की औसत बिरोज संग्रह व औस्त आय

कांगड़ा वन मण्डल		
के.एफ.सी.एस.	बिरोजा की वार्षिक औस्त क्विंटल में	राजस्व प्रतिवर्ष (औसत रू. में)
पालमपुर रेंज		
भगोटला	51	3680
गग्गल	113	11830
खलेट	52	2620
कुसमल	168	10310
पनापरी	137	6060
परौर	72	3100
कूल	593	37600
धर्मशाला रेंज		
घरो	1.3	70
सराह	10.3	580
सधेड़	3.2	170
कूल	15	820
ज्वालामुखी रेंज		
दनोआ	204	10150
अरला	172	9990
गुम्बर	43	2830
कूल	418	22970
नूरपुर वन मण्डल		
गहीन लगोड़	153	11280
लाहड़	78	5510
कूल	231	16790
इन्दौरा रेंज		
रै	133	8310
कूल	133	8310

के.एफ.सी.एस. मनियारा का वन जिसमें से मौल खडड् बहती है । वर्ष 1980 तक इस खडड् से रेत, बजरी निकालने के लिए खनिज निकासी के लिए पट्टा के.एफ.सी.एस. ही देती थी ।

खैर से आय

नूरपुर वनमण्डल और देहरा रेंज की कुछ के.एफ.सी.एस. के लिए खैर (एकेशिया कैटेचु), शिवालिक के निचले भागों के झाड़ी जंगलों में बहुतायत में पाई जाने वाली प्रजाति थी, इनके के.एफ.सी.एस. के लिए आय की दृष्टि से यह चील का बहुमूल्य विकल्प सिद्ध हुआ । खैर के पेड़ बेचे गए और उनसे सेहत और औषधि की दृष्टि से बहुमूल्य एवं लाभप्रद कत्था नामक उत्पाद निकाला गया ं के.एफ.सी.एस. के लिए वर्ष 1965 तक खैर की कौपिस कटान प्रणाली काफी लाभदायक बन गयी जिससे उसे 2000 से 3000 रूपये प्रति हैक्टयर अधिक मूल्य प्राप्त होने लगा । वर्ष 1972 के बाद वन विभाग ने के. एफ.सी.एस. के वनों में खैर कटान व बिक्री का काम स्वंय करना आरम्भ किया । कत्थे का मण्डी भाव 10,000/- रूपये प्रति किलोग्राम पहुंच गया । पर वन विभाग ने के.एफ.सी.एस. का हिस्सा अदा नहीं किया । (केवल त्रिप्पल के.एफ.सी.एस. का हिस्सा राशि 1,50,000/- रूपये बनती है)

विविध

ईंधन व कोयला (लकड़ी का) झाड़ी जंगलों के उत्पाद होते थे पर इन जंगलों को खड़ी अवस्था में भी बेच दिया जाता । इनकी स्थानीय क्षेत्रों व सेना–छावनियों यथा योल में भारी मांग होती थी । नूरपुर वन मण्डल के के.एफ.सी.एस. वनों में पाए जाने वाले बांस के झाड़ भी खड़े ही बेच दिए जाते । के.एफ.सी.एस. के आय के गौण स्रोत थे प्रतिवर्ष नीलाम होने वाले घास, स्थानीय घरों के निर्माण के लिए पत्थर सरकारी भवनों के निर्माण के लिए रेत व बजरी और चुल्हे पोतने के लिए सफेद मिट्टी की बिक्री ।

समग्र प्रबन्ध

कुल मिला कर के.एफ.सी.एस. अपने सदस्यों को उपभोग योग्य पदार्थो की बिक्री से स्थायी आय मुहैया करवाती थी । इससे सदस्यों को वनों के संरक्षण एवं प्रबन्धन के लिए सशक्त प्रोत्साहन मिला : कुछ के.एफ.सी.एस. ने तो अपने सदस्यों के लिए प्रतिवर्ष पेड़ लगाने का लक्ष्य नियत कर दिया । वन विभाग के पर्यवेक्षण से वनों से उड़ाऊ निकासी रोकने के लिए निरन्तर देखरेख सुनिश्चित हुई ।

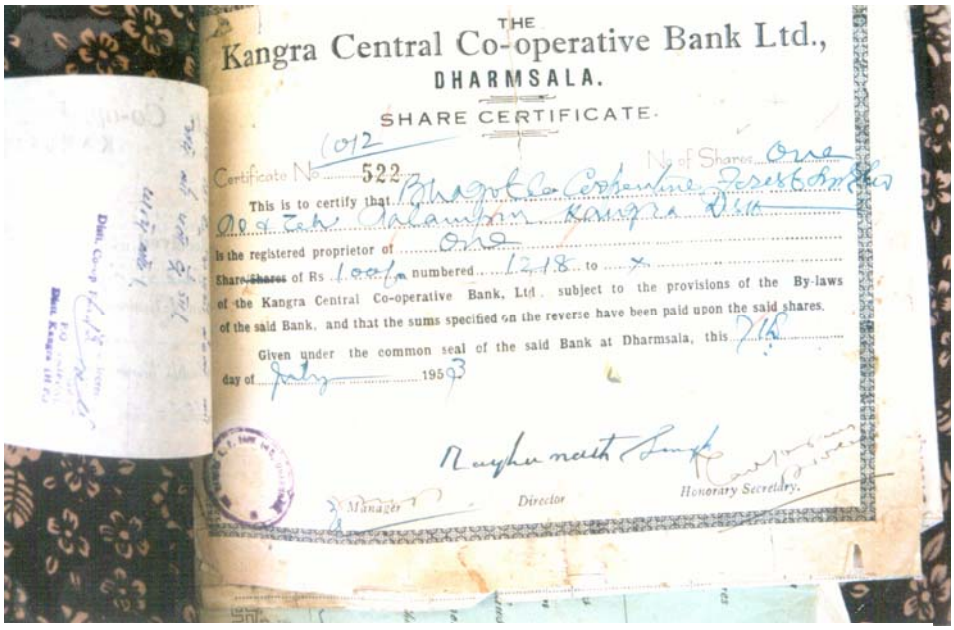

THE
Kangra Central Co-operative Bank Ltd.,
DHARMSALA.
SHARE CERTIFICATE.
Certificate No. 522
No. of Shares
This is to certify that
is the registered proprietor of
Share/Shares of Rs numbered to
of the Kangra Central Co-operative Bank, Ltd. subject to the provisions of the By-laws of the said Bank, and that the sums specified on the reverse have been paid upon the said shares.
Given under the common seal of the said Bank at Dharmsala, this
day of 195
Manager Director Honorary Secretary.

के.एफ.सी.एस. भगोटला के जिला सहकारी बैंक में शेयर शर्टिफिकेट जहाँ इसके खाते हैं ।

कोष–राशियां के.एफ.सी.एस. के नाम बैंक खातों में रखी जाती और सरकारी अदायगियां सीधे बैंक को भेजी जाती । वार्षिक लेखा जांच सहकारिता विभाग द्वारा की जाती थी ।

लेखा–परीक्षित बैलेंस शीट सम्बन्धित वन मण्डल अधिकारी को भेजी जाती थी और उस द्वारा सत्यापन और अनुमोदन के उपरान्त ही अगले वर्ष की सरकारी वित्तीय सहायता के.एफ.सी.एस. को मिल पाती ।

Audited Balance Sheet of The ARLA SALOH FOREST Society Ltd V&P.O ARLA SALOH Teh. Palampur Distt Kangra HP As on 31-3-2000

Lia. | Assets

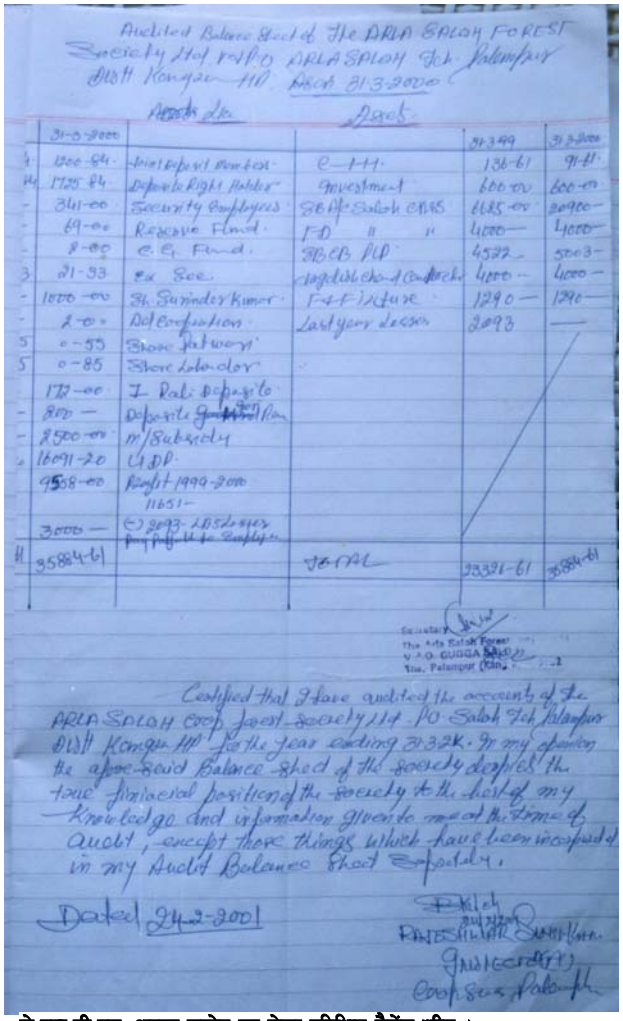

	31-3-2000			31-3-99	31-3-2000
4	1200-84	[illegible] Member	C-I-H	136-61	91-61
14	1725-84	Deposit Right Holder	Investment	600-00	600-00
-	341-00	Security Employees	SB A/c Saloh [illegible]	6625-00	20900-
-	69-00	Reserve Fund	FD " "	4000-	4000-
-	8-00	C.G. Fund	SBCB PLP	4522-	5003-
3	21-33	Ex Sec.	[illegible]	4000-	4000-
-	1000-00	Sh. Surinder Kumar	F & Fixture	1290-	1290-
-	2-00	[illegible]	Last year losses	2093	—
5	0-55	Share Patwari			
5	0-85	Share [illegible]			
	172-00	[illegible] Deposits			
-	800-	Deposits [illegible]			
-	2500-00	M/Subsidy			
	16091-20	UDP			
	9558-00	Profit 1999-2000			
		11651-			
	3000-	(-) 2093 - [illegible]			
11	35884-61		TOTAL	33321-61	35884-61

Secretary
The Arla Saloh Forest
V.P.O. GUGGA [illegible]
Teh. Palampur (Kan.)

Certified that I have audited the accounts of the ARLA SALOH Coop forest society Ltd PO Saloh Teh Palampur Distt Kangra HP for the year ending 31-3-2K. In my opinion the afore-said Balance Sheet of the society depicts the true financial position of the society to the best of my knowledge and information given to me at the time of audit, except those things which have been incorporated in my Audit Balance Sheet separately.

Dated 24-2-2001

RAJESH KUMAR [illegible]
[illegible]
Coop. Secs, Palampur

के.एफ.सी.एस. अरला सलोह का लेखा परिक्षित बैलेंस शीट ।

इक्की दुक्की मिसालें वित्तीय दुष्प्रबन्ध एवं दुरूपयोग की अवश्य मिलती हैं । वह भी आरम्भिक काल की किन्तु इनमें बड़ी राशियां संलिप्त नहीं थीं और न ही यह योजना बद्ध प्रयास होता था ।

पंजाब के राजनैतिक नियन्त्रण के दिनों में लेखा–जोखा प्रणाली जो सहकारिता विभाग के के.एफ.सी.एस. का लेखा देखने वाले प्रभाग ने विकसित की वह अत्यन्त विकट थी ।

ऐसा प्रकट रूप से विभागीय आवश्यकता के लिए किया गया था, के.एफ.सी.एस. को विचार में रखकर नहीं । के.एफ.सी.एस. के लिए तो सरल

लेखा पद्धति चाहिए थी । जिसमें आन्तरिक नियन्त्रण व सन्तुलन हो, जिन्हें सभाकार्यकारिणी स्वंय लागू कर सके ।

बीसवीं सदी के छठे दशक के अन्त और सातवें दशक के आरम्भ में, अचानक बिना कोई सूचना दिए और के.एफ.सी.एस. से बातचीत किए, इस स्थिति को समाप्त कर दिया । इमारती लकड़ी के अतिरिक्त सभी वन उत्पाद जो कांगड़ा के वनों से प्राप्त होते थे, उनका राष्ट्रीयकरण कर दिया और के. एफ.सी.एस. को उनके वनों की नीलामी से प्राप्त लाभ में से मिलने वाले हिस्से (हक चोहारम) से वंचित कर दिया । अब चील, खैर और ईधन की लकड़ी वाले पेड़ों के कटान और बिक्री का सारे का सारा काम और उससे मिलने वाला लाभ सीधे वन निगम या वन विभाग को मिल गया । बिरोजे की बिक्री से लाभ का भी कोई भाग के.एफ.सी.एस. के लिए नहीं रखा गया

लगभग ठीक उस समय जब के.एफ.सी.एस. वित्तीय व आर्थिक तौर पर स्वतन्त्र और व्यवहारिक बनने जा रही थी, उनके बहुत से आय के स्रोत और प्रोत्साहन जिनके बूते पर सामुदायिक वन प्रबन्धन अग्रसर हुआ, वापिस ले लिए गए ।

इससे भी बुरी बात यह हुई कि 1973 के बाद के.एफ.सी.एस. परियोजना पुन: अधिसूचित नहीं की गई और उन्हें "अवैधतौर पर लाभ कमाने वाली अनधिकृत संस्थाए" घोषित कर दिया गया । विशेषकर सरकारी भूमि से घास की बिक्री पर लाभ कमाने के लिए ।

अभी तक कार्य कर रही के.एफ.सी.एस. की, घास की बिक्री से और सहकारिता विभाग से मिलने वाले प्रबन्ध-अनुदान से होने वाली औसत आय 1500/- रूपये से 3000/- रूपये वार्षिक है । जो मात्र अपने कर्मचारियों, वन अधिकारियों और राखों को मामूली वेतन देने के लिए काफी होती है ।

वन प्रबन्धन प्रणालियां

के.एफ.सी.एस. के अधीन भूमि की किस्में

के.एफ.सी.एस. भूमि की सभी किस्मों का एक साथ प्रबन्ध करती थी । जैसा कि तालिका 5 में दर्शाया गया है । विस्तृत विवरण परिशिष्ट 1 में

उपलब्ध है । लगभग सभी प्रकार की भूमि के.एफ.सी.एस. को प्रबन्धन के लिए दी गई यहां तक कि आरक्षित वनों के नष्ट प्राय: क्षेत्र भी जिनमें बर्तनदारी हक शून्य होते थे समान्यता: अलंघनीय माना जाता था ।

तालिका 5: के.एफ.सी.एस. द्वारा प्रबन्धित वन किस्में			
आरक्षित वन	आर.एफ.	3 %	636 है.
सीमाङ्कित संरक्षित वन	डी.पी.एफ.	30%	6984 है.
असीमाङ्कित संरक्षित वन	यू.पी.एफ.	49%	11480 है.
अवर्गीकृत वन	यू.एफ.	14%	3282 है.
वन माफी वन	बी.एम	0.3%	71 है.
शामलात भूमि	पी.डब्ल्यू	0.4%	94 है.
निजी बंजर भूमि	एम.एस.	1%	392 है.
मलकीयत शामलात		2%	424 है.
कुल			23363 है.

टिप्पणी–सभा अनुसार विवरण परिशिष्ट 2 में उपलब्ध है । वैसी भूमियॉं जो चाय बगानों के व्यापारियों और किसानों के अधिन थे, सरकार के नियंत्रण में नहीं थे ।

यह तथ्य संकेत करता कि बहुत से किसानों ने अपनी निजी बंजर भूमी प्रबन्धन के लिए के.एफ.सी.एस. को सौंप दी, जो इस योजना की व्यावहारिकता और स्वीकार्यता (विशेषकर भू–मालिकों के बीच) की ओर संकेत करता है ।

यद्यपि के.एफ.सी.एस. का गठन निर्दिष्ट ढंग से किया गया और इन्हें कार्य योजना के साथ पंजीकृत किया गया पर कोई चीज नजरन्दाज हो गई जिसके कारण के.एफ.सी.एस. की अवधारणा कुछ समय बाद गम्भीर, वैधानिक और संवैधानिक परिसीमाओं का शिकार हो गई । यह चूक थी कि बहुत से मामलों में वनों पर नियन्त्रण के परिवर्तन का राजस्व अभिलेखों में इन्दराज नहीं हुआ ।

बेशक के.एफ.सी.एस. के प्रबन्धन में दिए जाने वाले क्षेत्र स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट, सीमाङ्कित और मौके पर परिभाषित थे और सीमाएं स्तम्भों द्वारा प्रदर्शित थी । जब कांगड़ा 1966 में हिमाचल प्रदेश का भाग बन गया, हिमाचल प्रदेश के राज्य क्षेत्र पर लागू भू–राजस्व अधिनियम के अन्तर्गत समस्त बंजर भूमि और वन क्षेत्र वन विभाग में निहित कर दिए गए और वहीं इनके प्रबन्ध के लिए जिम्मेवार भी बन गया । इस तरह से उन वनों पर, जो के.एफ.सी.एस. प्रबन्ध में थे, के.एफ.सी.एस. का स्वामित्वाधिकार व नियन्त्रण अचानक हटा दिया

गया । इसकी कानूनी व्याख्याओं पर भ्रम बना हुआ है यह के.एफ.सी.एस. को पुर्नजीवित करने की प्रक्रिया में बाधा बनी हुई है ।

वन-प्रबन्धन की प्रणालियां

प्रत्येक के.एफ.सी.एस. के लिए कार्य-योजना अधिकारी द्वारा अलग कार्य-योजना तैयार की गई । रावल द्वारा 1967 में सभी के.एफ.सी.एस. के लिए एक समग्र कार्य योजना बनाए जाने (रावल 1968) से पहले- के.एफ.सी. एस. की पृथक-पृथक कार्य-योजनाएं एक संशोधन की अवधि को मिलाकर 10 से 15 वर्ष के लिए होती थी । 1940-50 के दशक में कर्मचारियों की संख्या को देखते हुए एक-एक के.एफ.सी.एस. के लिए पृथक कार्य योजना बनाना एक बड़ी मेहनत का काम था । इसका एक विशेष उदाहरण भगोटला के.एफ.सी.एस. की 1942/43 से 1951/52 की अवधि के लिए बनाई गई कार्ययोजना से मिलता है । योजना में निम्न विषयों जैसे कि अधीनस्थ क्षेत्र, वन उत्पादन का उपयोग, (निकासी के ढंग, उनका मूल्य, कृषि एवं सामाजिक रीतियां, निर्यात रूपरेखा इत्यादि), वन कर्मी एवं मज़दूर संख्या, पिछली और भावी प्रबन्ध प्रणाली, अलग-2 वन प्रभागों या कार्य-वृत्तों सम्बन्धी कार्ययोजना व क्रियान्वयन का विस्तृत विवरण और विविध विनियमन पर दस्तावेज़ तैयार किया जाता था । इसमें के.एफ.सी.एस. के कार्यक्षेत्र की स्थलाकृति का नक्शा (आठ इंच में एक मील मापक्रम से तैयार किया गया) भी शामिल होता था । व्यवहारिक रूप में यह पृथक कार्ययोजनाएं एक आदर्श नमूने के अनुसार बनाई होती थी और उसका मुख्य उद्देश्य अन्धाधुन्ध चरान से जंगल को बचाने के लिए रकबे बन्द करना होता था । विभिन्न योजनाएं सीमित और एक सा नुस्खा विशेष प्रकार की रकबा बन्दी के लिए प्रस्तुत करता है विवरण नीचे दिया गया है ।

चील कार्य-वृत:- यह विधि ऐसे हल्के व खुले चील के वनों में लागू की गई जिनके छत्र उलझे होते, और खड़े पेड़ अलग-2 घनत्व के और जवाने होते । इसके लिए आवरण बनाते हुए चील के जंगलों में से प्रकाश उपलब्ध कराने का काम था, जहां खड़े झुण्ड युवा पेड़ों के होते थे पर उनका घनत्व भिन्न-भिन्न होता था । इस वानिकी पद्धति के अनुसार चराई रोकने के लिए रकबा बन्दी करके वन पुनरूत्पादन को सहायता प्रदान की जाती थी । कुछ अपवादों को छोड़ कर इनमें व्यापारिक स्तर पर कौपिस कटान उपयुक्त नहीं था

एक-प्रजातीय चील वन (के.एफ.सी.एस. मरण्डा भंगियार द्वारा प्रबन्धित) में बिरोजा निकासी

और सीमित कटान के.एफ.सी.एस. के सदस्यों की इमारती लकड़ी की मांग को पूरा करने के लिए किया जाता था ।

ईंधन व चारा कार्य-वृत :- इस कार्य वृत के अन्तर्गत बस्तियों के नज़दीकी चरागाह क्षेत्र लिए गए । इस पद्धति में वह भूमि जिसकी चरान के लिए स्थानीय लोगों को आवश्यकता होती, छोड़ कर शेष भूमि में चारा देने वाले पेड़ स्थानीय महत्व में लगा दिए जाते थे । मौखिक साक्ष्य मिलता है कि चरान के किन भागों को बन्द किया जाए, इस बात को लेकर वन विभाग और गांव वासियों के बीच ठनी रहती और गांव के निवासियों में, रकबे बन्द करने के पक्षधरों और विरोधियों के बीच भी असहमति बनी रहती । नूरपुर तहसील की कुछ के.एफ.सी.एस. को छोड़ कर इस कार्यवृत की सफलता भी नाममात्र थी क्योंकि वनरोपण के पहले पांच वर्षो में इन क्षेत्रों में वह चराई नहीं रोक पाए ।

वनरोपण-कार्य-वृत :- कटान से नंगे हुए और नष्ट प्रायः वन, जिनमें आर्थिक रूप से मूल्यवान वनस्पति न के बराबर होती थी, उन्हें अलग करके

वन-रोपण कार्यवृत बना दिया जाता था । इनमें व्यापारिक प्रजातियों, यथा, चील, खैर, बेहड़ा, हरड़, शीशम, आमला व युकालिप्टस के पेड़ लगाए जाते । चौड़ी पत्ती की प्रजातियों के पौध रोपण में कोपलें ही चरे जाने का भय रहता है इसीलिए बहुत सी के.एफ.सी.एस. के वन क्षेत्रों में, इस खतरे से मुक्त, व्यापारिक प्रजातियों जैसे चील, खैर, युकालिप्टस व शीशम के पेड़ ही लगाए दिखते हैं । नष्ट प्राय: वनों को नये वन रोपण के लिए तैयार करने का जो ढंग अपनाया जाता था, उससे काफी नुकसान होता था और सर्दियों में खरपतवार (झाड़ियां, निकम्मी पौध व गैर-व्यापारी प्रजाति के पौधे) को नष्ट करने के लिए तल पर आग लगाई जाती और फिर सर्दियों की बारिशों और गर्मियों की भीषण गर्मी के लिए अनावृत किया जाता । यह वैज्ञानिक वानिकी का एक और उदाहरण है जो हिमालय और उससे भी अधिक शिवालिक की सुकुमार पारिस्थितिकी को समझने में नाकाम रहा ।

संरक्षण कार्यवृत :- इसके अन्तर्गत के.एफ.सी.एस. के प्रबन्ध में लिए गए क्षेत्रों का सबसे बड़ा भाग आता था । चराई के लिए बन्द कर दिया जाता । यह समस्त क्षेत्र इसमें प्राकृतिक पुनरूत्पादन अधिनियम दिया जाता । कहीं-2 पौधा रोपण भी किया जाता ।पौधा-रोपण आमतौर पर अधिक सफल नहीं रहा, पर धीरे-2 प्राकृतिक वन-पुनरूत्पादन प्रक्रिया बड़े तौर पर सफल रही ।

रावल की एकीकृत (इन्टैग्रेटिड) कार्ययोजना में वर्ष 1968-69 के दौरान बनाई गई पृथक-2 कार्ययोजनाओं को समाविष्ट कर लिया गया । वन विभाग ने के.एफ.सी.एस. के सीमित सहयोग से आम सभा में पारित, पृथक-2 कार्ययोजना के स्थान पर, समस्त क्षेत्र में, एक तरफा परिवर्तन करके एकीकृत कार्ययोजना लागू कर दी । कोई अभिलेख नहीं मिलता जिसमें यह जिक्र हो कि एकीकृत (इन्टैग्रेटिड) कार्ययोजना लागू करने के लिए 70 के.एफ.सी.एस. का सामान्य सभा से, सुझाव मांगे गए हों अथवा सहमति व अनुमोदन प्राप्त किया हो ।

के.एफ.सी.एस. के वनों के प्रकार

1980-90 के दशक के शुरूआत में अर्थात 1981/82 से 1995/96 के लिए बनाई गई कार्य-योजना में कांगड़ा वन वृत के वन विभाग व के.एफ.सी.

एस. द्वारा प्रबन्धित वनों में बढ़ रहे औसत पेड़ (लकड़ी) भण्डार को दर्शाया गया है । (तालिका 6)

तालिका 6: बढ़ रहा औसत पड़ भण्डार कांगड़ा वन-वृत मी.^{3}/हैक्टर		
कटान अनुक्रम	बढ़ रहा औस्त पेड़ (लकड़ी) प्रति है. घन मीटरों में	
	धर्मशाला वन विभाग	देहरा वन विभाग
वन विभाग द्वारा प्रबन्धित वन अनुक्रम 1	132	113
वन विभाग द्वारा प्रबन्धित वन अनुक्रम 2	104	77
के.एफ.सी.एस. द्वारा प्रबन्धित वन अनुक्रम 3	171	93
स्रोत : कांगड़ा वन वृत की 1981/82 से 1995/96 के लिए कार्य योजना		

यह मान कर कि 1940-50 के दशक में जो वन क्षेत्र के. एफ.सी.एस. को प्रबन्धन के लिए दिए गए वह नष्ट प्राय व बंजर थे । उनमें 1970-80 के दशक के अन्त में उपलब्ध लकड़ी भण्डार और उसके मूल्य को देखते हुए स्पष्ट दिखता है कि यह भागीदारी प्रबन्ध की अवधारणा कितनी अधिक सफल थी । विशेषकर इसलिए कि वन विभाग द्वारा प्रबन्धित वन क्षेत्रों की तुलना में उपरोक्त स्थिति बेहतर थी ।

तालिका : 7 वर्ष 1967 में के.एफ.सी.एस. वनों का पूंजी-गत मूल्य				
सम्पदा		क्षेत्रफल है. में	दर रू./है.	मूल्य रू. में
भूमि		23560	1000	23,560,000
बढ़ रहा भण्डार	चील	2060	7000	14,420,000
	बान	250	3000	750,000
	ईन्धन	5970	400	2,388,000
	कौपिस	2160	1000	2,160,000
	बांस	21	1500	31,500
	वन-रोपण	3400	300	1,020,000
	संरक्षण	9700	1000	9,700,000
	वन्य जीव व लकड़ी के अतिरिक्त वन उत्पाद			200,000
कूल				54,229,500

इसकी दूसरी मिसाल के.एफ.सी.एस. शाहपुर में मिलती है । जहां बान (कुर्कस इन्काना) एक चौड़ी पत्ती के पेड़ों का वन बहुत अच्छी अवस्था में है और इतनी कम ऊंचाई वाले

कांगड़ा जिला के क्षेत्रों में इस प्रजाति के फलते फूलते वन का एकमात्र उदाहरण है ।

वर्ष 1967 में वन विभाग ने आकलन किया कि के.एफ.सी.एस. के अधीन वनों का मूल्य 5,42,29,500/- रूपये था । इसका वर्गवार विवरण तालिका 7 में दिया गया
है ।

उपरोक्त साक्ष्य, के.एफ.सी.एस. की कार्यकारिणी द्वारा लिए गए इस मोरचे का समर्थन करता है कि कुछ मृत-प्राय या बन्द सभाओं को छोड़ कर कुल मिला कर के.एफ.सी.एस. ने वन विभाग की तुलना में वनों का प्रबन्ध अच्छे ढंग से किया है । इस अनुभव के आधार पर वन विभाग भी अनधिकारिक तौर पर इस राय से सहमत है कि वनों पर लोगों का नियन्त्रण - लोगों की वनों से पूरी होने वाली जरूरतों के प्रति अधिक संवेदनशील होता है । वन विभाग की वर्तमान कार्य-शैली की वन सभाओं द्वारा अलोचना की जाती है । उदाहरण के लिए चील के पेड़ों पर बनाई गई नालिकाओं में बिरोज़े का बहाव बढ़ाने के लिए, तेज़ाब का अधिक प्रयोग करते हैं, जिससे पेड़ घोर तूफान के दौरान तड़क कर टूट जाते हैं और के.एफ.सी.एस. के वनों में परिपक्व अवस्था को पंहुचे पेड़ों को हानि पहुंचाते हैं ।

वन-अपराध

एक विस्तृत अधिसूचना[20] में साफ तौर पर कहा गया है, "कि इस बात को पूरे तौर पर स्पष्ट किया जाए कि बुनियादी तौर पर सभाएं व उनके कर्मचारी - वनों के संरक्षण के लिए उत्तरदायी हैं और यह कर्त्तव्य भार विशेषकर राखा और के.एफ.सी.एस. के वन अधिकारी पर आन पड़ता है ।" वन मण्डल अधिकारी व वन विभाग के कर्मचारियों का जिम्मा के.एफ.सी.एस. कर्मचारियों को मार्गदर्शन देने का था । वन अपराध क्या है ? उसे कैसे अभिलिखित करना है ? और के.एफ.सी.एस. के कर्मचारियों की शक्तियां क्या हैं ? इन सब पर विस्तृत और निश्चित परिभाषाएं गढ़ी गई । जब वन अपराध के.एफ.सी.एस. का ही सदस्य होता तो वन राखा या वन अधिकारी को शक्तियां प्राप्त थीं कि वह नुकसान की रिपोर्ट दर्ज करे, औजार जब्त करे, वन

उत्पादन जो चुराया गया है उसे भी जब्त करे और वन अपराधी को धर ले व गिरफ्तार करे ।

के.एफ.सी.एस. भगोटला का नक्शा जिसमें कार्ययोजना दस्तावेज शामिल है । इससें स्पष्ट रूप से विभिन्न, भूमि की किस्में उसका प्रबन्ध प्रणालियों का वर्णन है ।

जहां वन-अपराधी गैर सदस्य हो तो एक सप्ताह के भीतर दोषी और गवाहों के ब्यान और अपराध समायोजित करने के लिए प्रार्थना पत्र रेंज अफसर को भेजना आवश्यक था । यदि के. एफ.सी.एस. किसी वन अपराधी पर मुकद्मा चलाना चाहती हो तो मामला वन मण्डल अधिकारी को ऐसा करने के लिए भेजा जाता था । इस तरह जहां वन अपराधी पकड़ने का काम के.एफ. सी.एस. का होता था, वन मण्डल अधिकारी भारतीय वन अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त शक्यिों का प्रयोग करते हुए दण्डात्मक कार्यवाही करता था।

वन अधिकारी और राखा की के.एफ.सी.एस. के वनों से समीपता तथा उनका गांवों के लोगों अथवा स्थलाकृति से भली-भान्ति परिचय यह सुनिश्चित करता और शायद ही कोई अपराध उनकी नजर से छुप पाता । इससे उनके देखरेख कार्य में अधिक कुशलता आती थी, जिसकी अपेक्षा वन विभाग के गार्ड से नहीं की जा सकती थी क्योंकि उसे सैकड़ों हैक्टयर वन की देखभाल करनी पड़ती थी । यह पद्धति केवल वहां असफल रहती-जहां वन अधिकारियों द्वारा

राखा पर ठीक से निगरानी नहीं रखी जाती और व अपराधियों के साथ मिल कर अपराध छुपाने में स्वतन्त्र रहते ।

अपराध दर्ज करने के लिए तथापि नियम व प्रक्रियाएं विस्तृत व जटिल थे । 1940-50 के दशक में जब वन अधिकारी व राखे विशेषकर उर्दू नहीं जानते थे, के.एफ.सी.एस. कर्मचारियों को अपराधों के लिए सज़ा प्रक्रिया को लागू करना अति कठिन रहा होगा । जटिल प्रक्रियाओं के कारण सभी अपराधियों को लताड़ना और पक्के व बड़े अपराधियों पर वन मण्डल अधिकारी के माध्यम से मुकद्मा चलाना कठिन काम था, विशेषकर इसलिए कि वन अधिकारियों व राखाओं को लिखित प्रक्रियाओं के जानकार बनाने के लिए कोई प्रशिक्षण नहीं दिया जाता था । इसके अतिरिक्त वन विभाग में, के.एफ.सी.एस. के पूरे कार्यकाल में वन अधिकारियों व राखाओं को कानूनी तौर पर अपराधियों को दण्डित करने की प्रक्रिया से सम्बन्धित शक्तियां देने के विषय में भ्रान्ति का वातावरण बना रहा । उन्हें वन अधिकारी अधिसूचित किया तो जाता पर उन्हें दी गई शक्तियों को बार-बार वापिस ले लिया जाता था । ऐसा होने से अपराधियों को, लोगों द्वारा वन प्रबन्धन का क्रियान्वयन और देख रेख करने के कानूनी अधिकार पर प्रश्न चिन्ह लगाने का अवसर मिल गया ।

वर्तमान समय में वन विभाग के.एफ.सी.एस. के कर्मचारियों द्वारा वन अपराधों को पकड़ने व उन पर दण्ड प्रक्रिया लागू करने के अधिकार को मान्यता नहीं देता है । जिसका सीधा परिणाम, क्षेत्र में - अव्यवस्था होता है । अब भी वन विभाग के अलावा के.एफ.सी.एस. के कर्मचारी भी अपराधों को पकड़ते हैं एवं नुकसान का विवरण देने, और दण्ड राशि वसूल करने का काम कर रहे हैं । इस प्रकार के व्यवहार से पक्के अपराधियों को या संगठित लकड़ी तस्करों को भ्रष्ट वन अधिकारियों अथवा के.एफ.सी.एस. कर्मचारियों से मिली भगत करके वनों को नुकसान पहुंचाने में सुविधा मिलती है । जब कोई अपराध दर्ज किया जाता है तो वन विभाग के.एफ.सी.एस. को और के.एफ.सी. एस., वन विभाग को अपराधी होने के लिए दोषी ठहराते हैं । एक गम्भीर अपराध के मामले में वन मण्डल अधिकारी को के.एफ.सी.एस. कुशमल के रजिस्टर व परमिट बुक जब्त करने पड़े । बहुत से उदाहरण मिलते हैं जहां वन विभाग ने के.एफ.सी.एस. द्वारा वन अपराधियों से पकड़े गए वन उत्पाद विशेष

कर लकड़ी जब्त कर नीलाम किये और कहीं के.एफ.सी.एस. द्वारा गिरे हुए सूखे पेड़ नीलाम किए गए[21] । वन विभाग का दावा यह है कि के.एफ.सी.एस. द्वारा अपने सदस्यों को कीमती और अवैध रूप से काटी गई लकड़ी देने के लिए नीलामी का मात्र एक ढंग अपनाया गया है[22] उनका यह भी कहना है कि इस तरीके से लकड़ी के अवैध कटान को प्रोत्साहन मिलता है और के.एफ.सी. एस. पर अपने सदस्यों को लकड़ी की स्वीकृति देने पर लगाए गए प्रतिबन्ध दरकिनार करने का अवसर मिलता है ।

बहुत सी कार्यशील के.एफ.सी.एस. की वन अपराधियों को पकड़ कर दण्डित करने व जुर्माना वसूली से आय 1500/- रूपये से 2000/- रूपये तक है ।

के.एफ.सी.एस. मरण्डा भंगियार के राखे-सचिव अनंत कुमार (आग दाएं) के साथ

इमारती लकड़ी का वितरण

पहले इमारती लकड़ी का बर्तनदारों को, वितरण के.एफ.सी.एस. की कार्यकारिणी की सिफारिश पर किया जाता, बेशक तकनीकी तौर पर वन मण्डल अधिकारी ही निर्णायक प्राधिकृत अधिकारी होता था, जो स्वीकृति दे सकता था । के.एफ.सी.एस. की कार्यकारिणी के सदस्यों का कहना है कि वे पहले

प्रार्थी की आवश्यकता को जांचते है फिर वन में खड़े पेड़ों की वास्तविक उपलब्धता को आंकते हैं और तभी किसी सदस्यों को लकड़ी स्वीकृत करने की सिफारिश करते हैं । यदि कोई सदस्य जंगलों में लगी आग को बुझाने के काम में सहयोग नहीं देता तो उसकी प्रार्थना पर सिफारिश करने के लिए इन्कार कर देते थे । राखा और के.एफ.सी.एस. वनाधिकारी वन विभाग के एक कर्मचारी के साथ वन में जाते, उसमें परिपक्व अवस्था के पेड़ को छांट कर हैमर से अंकित कर देते । अतिरिक्त के.एफ.सी.एस. के उत्तरदायी अधिकारियों द्वारा की गई जांच से वन विभागीय या के.एफ.सी.एस. कर्मचारियों द्वारा अपरिपक्व पेड़ को देने अथवा प्रार्थियों से भेदभाव करने के प्रयास विफल हो जाते थे ।

वर्ष 1973 से के.एफ.सी.एस. कर्मचारियों व वन विभाग के कर्मचारियों के कर्तव्यों, अधिकारों, व जिम्मेदारियों का परस्पर टकराहट होता रहा और वन विभाग ने लकड़ी वितरण के लिए प्रार्थी चयन करने की प्रक्रिया में, बड़े स्तर पर के.एफ.सी.एस. की उपेक्षा करनी आरम्भ कर दी । बहुत सी के.एफ.सी.एस. की कार्यकारिणियों ने लकड़ी वितरण के लिए, सदस्यों के आग्रह पर, सिफारिश करना जारी रखा है पर कोई भी नियम वन मण्डल अधिकारी को उनकी सिफारिशें मानने के लिए बाध्य नहीं करता । वन मण्डल अधिकारी की कार्य शैली ही यह निर्धारित करती है कि के.एफ.सी.एस. द्वारा की गई सिफारिशों को माना जाएगा या नहीं । इसका अर्थ हो सकता है कि, यद्यपि वनों के प्रबन्ध और संरक्षण के लिए के.एफ.सी.एस. को ग्राम समुदायों का समर्थन प्राप्त है, उन्हें वन विभाग द्वारा सूचित नहीं किया जाता अर्थात उन्हें ज्ञान नहीं होता कि उनके वन में कोई पेड़ क्यों काटा जा रहा है । क्या वह पेड़ लकड़ी वितरण के अन्तर्गत स्वीकृत हुआ है या वन रक्षक (गार्ड) की मिली भगत से अवैध रूप से काटा जा रहा है ?

ऐसी ही भ्रान्ति, के.एफ.सी.एस. द्वारा किसी सदस्य के परिवार जन की मृत्यु पर, किसी अन्य गमी या खुशी के अवसर पर और विवाह इत्यादि पर, लकड़ी की तत्काल आवश्यकता को पूरा करने के लिए छोटे सूखे पेड़ स्वीकृत करने की प्रथा पर, बनी हुई है । बहुत सी के.एफ.सी.एस. अब, अच्छी ईंधन की लकड़ी वाले पेड़ों के स्थान पर उपरोक्त अवसरों पर सूखे झाड़ी नुमा पेड़ों

को स्वीकृत करती हैं परन्तु वन विभाग इस पर भी आपत्ति करता है (जैसा कि के.एफ.सी.एस. शाहपुर में हुआ) ।

उत्तरदायित्व व सहयोग के मामलों में अस्पष्ट स्थिति का, महा-अनर्थकारी प्रभाव हुआ है । 1973 से लेकर के.एफ.सी.एस. की सम्पदा को लूटा गया है । सूचनाएं मिली है कि के.एफ.सी.एस. से लकड़ी की तस्करी के लिए ऊंटों और टैक्सियों का प्रयोग किया गया है और वन विभाग व के.एफ.सी.एस. के नेक व ईमानदार कर्मचारी भी इस तस्करी को रोक नहीं पाए हैं । ग्राम समुदाय अपने जंगलों में लगने वाली आग को बुझाने के काम में कम रूचि लेने लगे हैं । इस प्रकार की लकड़ी की तस्करी के सतत् प्रवाह से उत्साहित हुए कुछ प्रभावशाली ग्राम वासियों ने के.एफ.सी.एस. के वनों पर अवैध कब्जे कर लिए हैं । जब कुछ के.एफ.सी.एस. ने इसकी वन मण्डल अधिकारी से शिकायत की (के.एफ.सी.एस. भगोटला) तो दल भेजकर पुर्नसीमाङ्कन करवा कर अवैध कब्जे अंकित कर दिए गए पर उन कब्जों को हटाने का कोई प्रयास नहीं किया गया ।

इसी प्रकार कुछ के.एफ.सी.एस. द्वारा असीमाङ्कित संरक्षित वनों के भागों को सरकार को गांव में लोकोपयागी भवन बनाने के लिए (स्कूल, डिस्पैन्सरी इत्यादि के लिए) आबंटित किया है जिसे वन विभाग ने अवैध कब्ज़े मानकर उन भवनों को हटाने का, के.एफ.सी.एस. को आग्रह किया है ।

मरण्डा भंगियार के.एफ.सी.एस. की बैठक (बर्तनदारों को भवन निर्माण अथवा मुरम्मत के लिए) लकड़ी-वितरण के लिए जो 2001 में की गई इसमें महिला मण्डल प्रतिनिधियों को भी आमन्त्रित किया गया - क्योंकि महिलाएं के.एफ.सी.एस. की सदस्याएं हैं ।